है। मगर मैं एक बात कहूंगा कि माइकल मैथ्यूज़ ने कल अमूर्तीकरण के बारे में जो बात कही थी वह भाषा के क्षेत्र में भी बखूबी झलकती है, जहां यह शायद भाषा के अध्ययन का एक प्रमुख तत्व है। तो यदि इस तरह का अमूर्तीकरण प्राकृतिक विज्ञान का लक्षण है, तो भाषा विज्ञान भी प्रकृति विज्ञान के साथ बैठने का दावा कर सकता है।

के.पी. मोहनन

विज्ञान शिक्षा में निष्कर्ष, प्रमाण और जांच पड़ताल

शुक्रिया। आयोजकों ने मुझे विज्ञान से जुड़े व विज्ञान शिक्षा के पाठ्यक्रम, कक्षा शिक्षण, मूल्यांकन वगैरह से जुड़े दार्शनिक, राजनैतिक और अवधारणात्मक मुद्दों पर विचार करने को कहा है और यह भी कहा है कि मैं इन दोनों (विज्ञान व विज्ञान शिक्षा) को जोड़कर देखूं। मेरी तत्काल प्रतिक्रिया थी कि यह तो बहुत मुश्किल है। खैर, कोशिश करके देखता हूं। यह बता दूं कि एक पर्चा वितरित किया गया है और मैं करीब 25 मिनट बोलूंगा और बीच में कहीं मनमाने ढंग से रुक जाऊंगा। उसके आगे का व्याख्यान तब जारी रहेगा जब आप लौटेंगे और पर्चा पढ़ेंगे।

मैं विज्ञान शिक्षा को आज जिस ढंग से देखता हूं उसकी नाकामी के बारे में कुछ कहूंगा, और जानने के एक पैराडाइम के रूप में विज्ञान के बारे में कुछ कहूंगा और इसके आधार पर हमारे पाठ्यक्रम में क्या होना चाहिए। इस तरह से मैं इन दोनों को जोड़ने की कोशिश करूंगा। फिर मैं सीखने के कुछ अभ्यास बताऊंगा जो इस पैराडाइम को प्रतिबिंबित करते हैं ताकि छात्र विज्ञान के इस पैराडाइम को, इस ज्ञान शास्त्र को हासिल कर सकें और उसके बाद मैं मूल्यांकन कार्य के कुछ उदाहरण दूंगा। ज़ाहिर है, मैं इन उदाहरणों की बात बहुत विस्तार में नहीं कर पाऊंगा मगर उदाहरणों से कुछ अंदाज़ लगेगा कि हम किस तरह की चीज़ें कर सकते हैं।

तो, शुरुआत यह कहकर करता हूं कि धर्म और अकादमिक जगत के बीच एक बुनियादी अंतर है, जो हम देखेंगे - खैर यह बताने की ज़रूरत नहीं है, हम सब इसे जानते हैं। धर्म में (यदि मैं एक ईसाई हूं, एक मुस्लिम हूं, हिंदू हूं, जो भी मेरा धर्म हो) मैं चाहूंगा कि मेरी बेटी उसी धर्म में शादी करे। धर्म में यह काफी आम बात है। मगर अकादमिक जगत में यदि मैं स्थिर अवस्था सिद्धांत (steady state theory) में यकीन करता हूं, तो मैं यह आग्रह नहीं करता कि मेरा बेटा या बेटी भी स्थिर अवस्था सिद्धांत को स्वीकार करे। मैं उन्हें चुनने की छूट देता हूं। ऐसा धर्म में सामान्य तौर पर नहीं होता। संस्थाबद्ध धर्म में हम चाहेंगे कि हमारे विश्वास, हमारे मूल्य हमारे बच्चों में स्थानांतरित हों, मगर अकादमिक जगत में नहीं। तब हम यह उम्मीद करेंगे कि शिक्षा के क्षेत्र में धार्मिक की बजाय अकादमिक मानसिकता झलके। बदकिस्मती से, जैसा कि मुझे नज़र आता है, ऐसा होता नहीं है। शिक्षा धर्म की परंपरा का निर्वाह करती आ रही है, मत-शिक्षण (इनडॉक्ट्रिनेशन) की परंपरा का अनुकरण करती आ रही है। यह मुख्य बात मैं कहना चाहता हूं, और यही बात इवान इलिच ने भी कुछ दशकों पहले अपनी पुस्तक 'डीस्कूलिंग सोसायटी' में कही थी कि संस्थाबद्ध शिक्षा एक तरह का इनडॉक्ट्रीनेशन ही है। और उनका समाधान यह था कि स्कूल व कॉलेजों को खत्म कर दिया जाए। हालांकि मैं उनकी आलोचना से सहमत हूं मगर मैं उनके संमाधान को स्वीकार नहीं करूंगा। एक वैकल्पिक समाधान

है - संस्थाबद्ध शिक्षा की प्रकृति को बदलना, उसे इनडॉक्ट्रीनेशन की जगह सशक्तिकरण का एक ज़रिया बनाना।

इनडॉक्ट्रीनेशन से मेरा क्या अर्थ यह समझने के लिए हम प्रसिद्ध 'मंकी ट्रायल' (बंदर मुकदमा) का उदाहरण देख सकते हैं। इसका विवरण पर्चे में बिंदु क्रमांक 1 में दिया गया है। 1925 में संयुक्त राज्य में एक स्कूली शिक्षक पर जैव विकास पढ़ाने की कोशिश करने के लिए मुकदमा चलाया गया था। आप उससे परिचित ही हैं। और एक तरह से वह मुकदमा ठेठ 2005 तक जारी रहा जब टेक्सास के एक विश्वविद्यालय प्रोफेसर की छानबीन इसलिए की जा रही है क्योंकि उसने कहा था कि उसके छात्रों को जैव विकास के सिद्धांत को मानना चाहिए। बुश प्रशासन बंदर मुकदमा शैली की ओर लौट रहा है। टेक्सास के इस प्रोफेसर ने किया यह कि एक वेबसाइट तैयार करके यह कहा कि वह जीव विज्ञान के छात्रों की सिफारिश मेडिकल स्कूल के लिए तब तक नहीं करेगा जब तक कि वे जैव विकास के सिद्दांत को नहीं मानते। तो मैं यू.एस. में चल रही सृष्टिवाद, सोची-समझी डिज़ाइन (यानी इंटेलिजेंट डिज़ाइन) बनाम जैव विकास की बहस को लेकर कुछ सवाल उठाना चाहूंगा। सवाल पर्चे के बिंदु क्रमांक 2 में दिए गए हैं।

1. क्या जैव विकास का सिद्धांत महज़ एक अटकल ('only a theory') है, जैसा कि सृष्टिवाद या इंटेलिजेंट डिज़ाइन के समर्थक दावा करते हैं, या यह एक तथ्य है, जैसा कि जैव विकास सिद्धांत के कुछ हिमायती दावा करते हैं? एक अटकल और एक तार्किक रूप से वैध निष्कर्ष के बीच अंतर का सवाल यहां उठता है। तो हमें इस सवाल का जवाब देने से पहले इन शब्दों को समझना होगा।
2. दूसरा सवाल यह है कि क्या इंटेलिजेंट डिज़ाइन एक वैज्ञानिक सिद्धांत है। इस सवाल का जवाब देने के लिए हमें यह समझना होगा कि एक अटकलनुमा सिद्धांत या गणितीय सिद्धांत के विपरीत वैज्ञानिक सिद्धांत क्या होता है।
3. क्या इंटेलिजेंट डिज़ाइन का सिद्धांत उतना ही विश्वसनीय या संभव है जितना कि जैव विकास का सिद्धांत, जैसा कि इंटेलिजेंट डिज़ाइन के समर्थक दावा करते हैं?
4. इंटेलिजेंट डिज़ाइन के समर्थकों की मांग है कि सृष्टिवाद या इंटेलिजेंट डिज़ाइन का सिद्धांत जैव विकास के साथ-साथ पढ़ाया जाए। क्या ऐसा करने में कोई नुकसान है? आखिर हम सूर्य-केंद्रित सिद्धांत के साथ-साथ टोलेमी का सिद्धांत पढ़ाते ही हैं। इसी प्रकार से डाल्टन का अविभाज्य परमाणु का सिद्धांत क्वांटम यांत्रिकी के साथ पढ़ाया ही जाता है। ऐसा करने में कोई नुकसान है क्या? इस सवाल का जवाब देने के लिए हमें निम्नलिखित सवाल का जवाब देना होगा - पढ़ाने से हम क्या अर्थ समझते हैं? मैं जल्दी ही इस पर आता हूं।

दरअसल टेक्सास विश्वविद्यालय के प्रोफेसर यही कह रहे थे, "मैं जैव विकास में विश्वास करता हूं, मैं चाहता हूं कि मेरे छात्र भी जैव विकास में यकीन करें।" तो क्या प्रोफेसर डिनी, जिनके बारे में यू.एस. का न्याय विभाग जांच-पड़ताल कर रहा है, की यह बात उचित है कि वे ऐसे किसी विद्यार्थी के लिए सिफारिश नहीं करेंगे जो जैव विकास के सिद्धांत को स्वीकार न करता हो? जवाब हां हो या ना, मगर अंतिम सवाल यही है - वह समाज कितना सुरक्षित है, जिसके डॉक्टर सारे प्रमाणों और तर्कों के बावजूद जैव विकास की बजाय सृष्टिवाद को मानते हैं? यह एक स्वतंत्र सवाल है। हमें इस तरह के सवालों के जवाब देने होंगे। आखरी सवाल का सम्बंध उस बात से है जो सत्यजीत ने हमारे क्रियाकलापों और जीवन को नियंत्रित करने वाले निर्णायक विश्वासों को लेकर कल उठाई थी।

अब मैं कुछ जवाबों पर आता हूं। मैंने पहले कहा था कि इनमें से कुछ प्रश्नों का उत्तर देने से पहले हमें यह समझने की ज़रूरत है कि पढ़ाने से हम क्या अर्थ समझते हैं। पढ़ाने की पारंपरिक धारणा की रूपरेखा पर्चा क्रमांक 3 में दी गई है। जब हम कहते हैं कि एक्स ने वाय को पढ़ाया कि आत्मा अनश्वर है, तो सामान्यतः हमारा मतलब होता है कि एक्स ने वाय को इस मत से अवगत कराया कि आत्मा अनश्वर है, जिससे वाय को इसे समझने में मदद मिली। मगर इसमें महत्वपूर्ण बात यह है कि एक्स ने वाय को यकीन दिलाया कि यह बात सत्य है। यानी आप यह नहीं कह सकते कि "उसने मुझे पढ़ाया कि आत्मा अनश्वर है मगर मुझे यकीन नहीं है कि आत्मा अनश्वर है।" पढ़ाना शब्द में कुछ ऐसी बात है जिससे कपट जुड़ा है। और यदि आप 'पढ़ाने' का यह अर्थ लेते हैं तो इसके साथ शिक्षक का जो रवैया होता है वह 3 (ख) में दिया गया है: "मैं तुम्हें बताऊंगा कि किस चीज़ पर विश्वास करो, मैं तुम्हें बताऊंगा कि क्या करो।" मेरा कहना है कि यह शिक्षकों और शिक्षा प्रणालियों का पारंपरिक रवैया है।

मैं एक विकल्प सुझाना चाहूंगा जो क्रमांक 4 में दिया गया है। विकल्प यह है "मैं तुम्हें नहीं बताऊंगा कि क्या मानो। मगर स्वयं यह फैसला करने की क्षमता विकसित करने में तुम्हारी मदद कर सकता हूं कि क्या मानो और क्या करो।" और मेरा कहना है कि शिक्षा का यही नज़रिया विज्ञान के दर्शन से मेल खाता है, पहला वाला नहीं।

बदकिस्मती से जो किया जाता है वह ठीक इसके विपरीत है। विज्ञान शिक्षा आम तौर पर अपने छात्रों को यही बताती आई है कि "मैं तुम्हें सत्य बताता हूं।" आपको एक उदाहरण देता हूं। बतौर एक छात्र मुझे बताया गया था कि पृथ्वी घूमती है और सूर्य की परिक्रमा करती है और मुझे इस पर विश्वास करना पड़ा था क्योंकि मेरे शिक्षक ने ऐसा कहा था। मुझे कोई इल्म नहीं था कि मैं क्यों इस बात को मानूं। बहुत बाद में, अपनी पीएच.डी. पूरी करने के दो वर्षों बाद, मुझे यह आभास हुआ कि मेरे अंदर यह विश्वास है कि पृथ्वी घूमती है और सूर्य की परिक्रमा करती है मगर मुझे ज़रूरी प्रमाणों का कोई अंदाज़ नहीं है। मैंने इसे माना था क्योंकि मुझे मेरे शिक्षक ने बताया था। यह और कुछ नहीं इनडॉक्ट्रीनेशन है। मैं बहुत शर्मिंदा हुआ कि मैं इस बात में यकीन करता हूं जबकि प्रमाणों के बारे में कुछ नहीं जानता। मैं भाषा विज्ञान में ऐसा कदापि न करता। और फिर मैंने प्रमाणों की तलाश शुरू की, बहुत मुश्किल नहीं था। हालांकि किसी भी पाठ्य पुस्तक में ये प्रमाण नहीं थे।

पाठ्य पुस्तकें आपको प्रमाण व कारण नहीं बतातीं; वे तो सिर्फ निष्कर्ष देती हैं। और जब तक मैंने भाषा विज्ञान में काम करना शुरू न किया, तब तक मेरी शिक्षा इसी प्रकार की थी। मुझे ये निष्कर्ष अपने शिक्षकों और पाठ्य पुस्तकों से स्वीकार करने पड़े थे, सम्बंधित प्रमाणों और तर्कों की मुझे भनक तक नहीं थी। और मुझे उन सारे स्कूली वर्षों पर बहुत पछतावा रहा जहां मुझे इनडॉक्ट्रीनेट किया गया था। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि वे सारे निष्कर्ष गलत थे - निष्कर्ष सही थे या गलत, वह अलहदा सवाल है। मुझे सिर्फ निष्कर्ष बताए गए थे। हमें इसी तरह की विज्ञान शिक्षा विरासत में मिली है, जो धार्मिक शिक्षा से अलग नहीं है। यह क्रमांक 5 में दिया गया है - यदि आप विज्ञान को महज़ ज्ञान के एक भंडार के रूप में देखते हैं, तो शिक्षा का मतलब होता है छात्रों को ज्ञान के इस भंडार से वाकिफ करा देना, और उनकी मदद करना ताकि वे इस भंडार का उपयोग करके स्टैण्डर्ड समस्याओं को हल कर सकें। यदि आप इससे आगे जाएं, जैसा कि क्रमांक 5(क) और 5(ख) में बताया गया है, तो हम विज्ञान को एक ज्ञान शास्त्रीय पैराडाइम के रूप में देखते हैं। और मैं पैराडाइम शब्द का उपयोग कुनवादी खिचड़ी के रूप में नहीं कर रहा हूं। माफ कीजिए, मुझे शायद खिचड़ी

जैसे शब्दों का उपयोग नहीं करना चाहिए मगर मुझे लगता है कि कुन खिचड़ी-दिमाग थे। कुन ने पैराडाइम शब्द का उपयोग ज्ञान शास्त्र और सिद्धांतों व अवधारणाओं दोनों के लिए किया है। मैं पैराडाइम शब्द का उपयोग सिद्धांतों के संदर्भ में नहीं, मात्र ज्ञान शास्त्र के संदर्भ में कर रहा हूं। यानी न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत और आइंस्टाइन का गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत दोनों एक ही पैराडाइम के हिस्से हैं। इस अर्थ में वे अलग-अलग नहीं हैं। वे दो अलग-अलग सिद्धांत हैं। तो यदि आप ज्ञान शास्त्रीय पैराडाइम को जानने के तरीकों के रूप में देखें, तो यह ज़रूरी है कि छात्र अपनी विज्ञान शिक्षा में इस हिस्से को भी समझें। और इसके लिए हमें न सिर्फ निष्कर्षों से परिचय और उन्हें समझने की बात ही नहीं बल्कि यह भी शामिल करना होगा कि छात्र उन प्रमाणों को भी समझें जिनकी मदद से वैज्ञानिक उन निष्कर्षों तक पहुंचे हैं। सामान्यतः पाठ्य पुस्तकों और कक्षाओं में यही नहीं किया जाता। जैसा कि मेरे संदर्भ में हुआ था कि मैं सूर्य केंद्रित परिकल्पना के प्रमाणों को नहीं जानता था।

वैज्ञानिक ज्ञान के विकास से परिचय और समझ, माइकल कल इसी चीज़ का आव्हान कर रहे थे - निष्कर्ष से सम्बंधित प्रमाणों व तर्कों का आलोचनात्मक ढंग से मूल्यांकन करने की क्षमता और अंततः वैज्ञानिक जांच-पड़ताल में जुड़ने की सामर्थ्य। ज़रूरी नहीं कि आप वैज्ञानिक ज्ञान के विकास में योगदान दें, मगर इस तरह की जांच-पड़ताल में शरीक होने के लिए, विभिन्न किस्म के सवालों को हल करने के लिए भी यह ज़रूरी है। तो यह एक चीज़ है, जो विज्ञान के पाठ्यक्रम में होनी चाहिए, सिर्फ निष्कर्ष नहीं।

एक और चीज़, एक बार फिर ज्ञान शास्त्रीय पैराडाइम मगर इस बार इसमें कुछ रवैये और मूल्य भी शामिल हैं - वैज्ञानिक ज्ञान समेत समस्त मानव ज्ञान की अनिश्चितता के प्रति जागरूकता जैसे रवैये, शंका करने व सवाल पूछने, अधिकारी के आज्ञापालन की बजाय स्वस्थ असम्मान, तार्किक कारण के प्रति निष्ठा जैसे मूल्य - क्रमांक 7 में वर्णित चीज़ों के समान। मैं विस्तार में नहीं जाऊंगा। और यदि हम मानते हैं कि क्रमांक 6 व 7 में वर्णित चीज़ें महत्वपूर्ण हैं, तो हमें मानना होगा कि पारंपरिक विज्ञान शिक्षा हमें विज्ञान की सच्ची शिक्षा देने में असफल रही है, क्योंकि विज्ञान को एक धर्म की तरह पढ़ाया गया है। दरअसल एक सत्ता को दूसरी सत्ता की जगह रखा गया है। क्रमांक 8 में मैंने यही आलोचना प्रस्तुत की है।

विज्ञान शिक्षा की दो महत्वपूर्ण नाकामियां निम्नलिखित रही हैंः

1) पाठ्य पुस्तकों और कक्षाओं में प्रमाणों और तर्कों की चर्चा का अभाव। यह छात्रों को निष्कर्षों पर शंका करने और सवाल उठाने में असमर्थ बना देता है। यदि आप प्रमाणों से परिचित नहीं हैं, तो आप निष्कर्षों पर शंका कैसे कर सकते हैं या उन्हें चुनौती कैसे दे सकते हैं? आपको बगैर सोचे-समझे इन निष्कर्षों को मानना होगा। यह छात्रों को आलोचनात्मक सोच में असमर्थ बनाता है। इससे सारी आलोचनात्मक जांड-पड़ताल को लकवा मार जाता है।

2) दूसरी है कि पाठ्यक्रम में जांच-पड़ताल के तत्व का अभाव है। मैं पारंपरिक शिक्षा की बात कर रहा हूं, जिस तरह की शिक्षा मुझे मिली थी और जो आज के छात्रों को मिल रही है। यदि लोग शंका करने और सवाल उठाने, ज्ञान की अनिश्चितता वगैरह के महत्व के कायल नहीं होते, तो मैं प्रायः विशेषज्ञों का आव्हान यह दर्शाने के लिए करता हूं कि विशेषज्ञ गलती कर सकते हैं, और यह फाइनमैन के एक वक्तव्य के रूप में बॉक्स में दिया गया है। कभी-कभी छात्र और शिक्षक फाइनमैन और आइंस्टाइन के वक्तव्यों से आश्वस्त हो जाते हैं, यह एक अच्छा कथन है। कुल मिलाकर अनिश्चितता को स्वीकार करने का मूल्य, शंका करने व सवाल उठाने का मूल्य ही विज्ञान शिक्षा का मूल्य है।

यदि आप सहमत हैं कि यही विज्ञान है, तो अगला सवाल यह होगा कि विज्ञान के पाठ्यक्रम में क्या रखा जाए। भाग 2 में मैं इसी की चर्चा करूंगा। जैसा कि मैंने कहा था, मैं पैराडाइम को ज्ञान शास्त्र के अर्थ में प्रयुक्त करता हूं और फ्लेक ने 1930 में इसी अवधारणा की ओर संकेत किया था। उन्होंने सबसे पहले विज्ञान में तथ्यों के सृजन की बात की थी, और मेरा ख्याल है कि कुन ने वहीं से पैराडाइम का विचार चोरी किया था। तो यदि आप कहते हैं कि जांच-पड़ताल सवालों के जवाब खोजने की या समस्याओं का समाधान खोजने की प्रक्रिया है तो जांच-पड़ताल के तीन घटक हैं, जैसा कि मैंने 9(ख) में बताया है। एक है पद्धति, मतलब उत्तर तक पहुंचने का तरीका, दूसरा है औचित्य का प्रमाण, मतलब जवाब को स्वीकार करने के कारण, और फिर आलोचनात्मक सोच, मतलब किसी उत्तर की विश्वसनीयता का आलोचनात्मक मूल्यांकन। और ये वे चीज़ें हैं जिन पर छात्रों को महारत हासिल करना चाहिए।

विज्ञान में जांच-पड़ताल की शैली को समझने के लिए हमें वैज्ञानिक जांच-पड़ताल को तार्किक जांच-पड़ताल के अन्य स्वरूपों और ऐसी चीज़ों की पृष्ठभूमि में रखना होगा जो कुछ मायनों में तार्किक जांच-पड़ताल के दायरे से बाहर हैं। तो मैं वैज्ञानिक जांच-पड़ताल को एक ऐसी जांच पड़ताल के रूप में देखता हूं जो आम तौर पर प्राकृतिक विज्ञानों में परिलक्षित होती है मगर ज़रूरी नहीं कि यह मात्र प्राकृतिक विज्ञानों तक सीमित रहे। इसके विपरीत गणितीय जांच-पड़ताल है, जो जांच-पड़ताल की एक ऐसी शैली है जो गणित की खूबी है और जैसा कि कई अन्य वक्ताओं ने स्पष्ट किया है, वैज्ञानिक व गणितीय जांच-पड़ताल के बीच बुनियादी फर्क का ध्यान रखना ज़रूरी है। फिर आपके पास अटकलनुमा जांच-पड़ताल है, विश्लेषणात्मक दर्शन शास्त्र की जांच-पड़ताल है, सौंदर्य शास्त्र की जांच-पड़ताल है, नैतिक जांच-पड़ताल है। ये सभी तार्किक जांच-पड़ताल के रूप हैं और वैज्ञानिक जांच-पड़ताल भी इसका ही एक रूप है मगर तार्किक जांच-पड़ताल के पूरे दायरे को समझने के लिए इनके बीच के अंतरों को समझना ज़रूरी है। मैं बात यह कह रहा हूं कि पाठ्यक्रम में कुछ हद तक इन अंतरों को स्पष्ट किया जाना चाहिए, वैज्ञानिक जांच-पड़ताल और तार्किक जांच-पड़ताल के अन्य रूपों की कुछ खूबियों को स्पष्ट किया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम में निष्कर्षों के कारण बताने के प्रति संकल्प होना चाहिए, जो तार्किक जांच-पड़ताल के सारे रूपों का साझा लक्षण है।

इनमें से कुछ संकल्पों को वैज्ञानिक जांच-पड़ताल की विचारधारा माना जा सकता है। उदाहरण के लिए, वैज्ञानिक जांच-पड़ताल की विचारधारा का एक अहम पहलू शंका करना और सवाल उठाना तथा आंख मूंदकर किसी अधिकारी की बात को स्वीकार करने से इन्कार करना है, जो तार्किक जांच-पड़ताल या अकादमिक जांच-पड़ताल का एक साझा पहलू है। यह बात तब स्पष्ट हो जाती है जब आप दूसरी किसी विचारधारा को देखें जिसमें शंका करना पाप माना जाता है। यह बात कई धर्मों में निहित है और जहां सत्ता को - धर्मग्रंथों की सत्ता या धर्मगुरु की सत्ता - को स्वीकार करना ज़रूरी होता है। वैज्ञानिक जांच-पड़ताल इसी के खिलाफ है। ये दो वैकल्पिक विचारधाराएं हैं और इन्हें एक मायने में विचारधाराएं मानना ज़रूरी है, वह विचारधारा जो वैज्ञानिक जांच-पड़ताल की बुनियाद है।

इस तरह से कुछ और चीज़ें हैं जो पाठ्यक्रम का हिस्सा होनी चाहिए, इन्हें क्रमांक 12 में दर्शाया गया है। जैसे सिद्धांतों की प्रकृति के बीच अंतर। जैसे गणितीय जांच-पड़ताल में सिद्धांत कुछ एक्सियम्स (मूल मान्यताओं), कुछ परिभाषाएं होती हैं और उनके तार्किक परिणाम प्रमेय होते हैं। और आप प्रमेय को यह दर्शाकर सिद्ध करते हैं कि उसके निष्कर्ष परिभाषाओं और एक्सियम्स से उभरते हैं। मगर वैज्ञानिक जांच-पड़ताल के मामले में ऐसा नहीं होता क्योंकि वैज्ञानिक सिद्धांतों को इस आधार पर सही नहीं ठहराया जा सकता कि वे चंद एक्सियम्स और परिभाषाओं से उभरते हैं। वैज्ञानिक सिद्धांतों को इस आधार पर सही कहा

जाता है कि वे अवलोकनों की व्याख्या करते हैं। तो ये अलग-अलग ढंग के कारण हैं। एक और बात यह है कि जब कोई गणितीय प्रमेय सिद्ध की जाती है, तो वह सदा के लिए सिद्ध हो जाती है, इसे 'असिद्ध' नहीं किया जा सकता। दूसरी ओर, कोई वैज्ञानिक सिद्धांत जिसे 'सिद्ध' किया जा चुका है, नए अवलोकन के प्रकाश में वह गलत साबित भी हो सकता है। और इस अंतर को समझना बहुत ज़रूरी है। विश्लेषणात्मक दर्शन शास्त्र में कोई सिद्धांत अवलोकनों के आधार पर नहीं बल्कि साझा अंतर्बोध (intuition) के आधार पर उचित ठहराया जाता है। और आत्मा का प्लेटो का सिद्धांत अटकलनुमा दर्शन शास्त्र है, मुझे पता नहीं कि क्या इन चीज़ों का कभी कोई कारण दिया जाता है, आपको सिर्फ इतना बताना होता है कि इनमें आंतरिक सुसंगति है। और छात्रों के लिए इन विभिन्न किस्म के प्रमाणों को देखना चाहिए ताकि वे यह समझ सकें कि वैज्ञानिक जांच-पड़ताल किन मायनों में नैतिक या सौंदर्य शास्त्रीय जांच-पड़ताल से अलग है। और इन चीज़ों को पाठ्यक्रम में, अभ्यासों में, मूल्यांकन में गुंथा जा सकता है।

इसके बाद अन्य चीज़ें हैं जिन्हें मैंने क्रमांक 12 (ख), (ग), (घ) के रूप में लिखा है। ये वे बातें हैं जिनकी चर्चा हम इस सम्मेलन में पिछले दो दिनों से करते रहे हैं, मैं इनके विस्तार में नहीं जाऊंगा। तो मैं बिंदु क्रमांक 13, 14 वगैरह को छोड़ रहा हूं, इन्हें आप सोने से पहले पढ़ लीजिएगा।

अब मैं चलता हूं सीखने के अभ्यासों और मूल्यांकन पर। इन दोनों के लिए हम तीन बुनियादी श्रेणियां सोच सकते हैं। पहले अभ्यास वे हैं जिनमें किसी सिद्धांत को लागू करना होता है। आम तौर पर यही करवाए जाते हैं। जैसे भौतिक शास्त्र की पाठ्य पुस्तक में छात्र से कहा जाएगा कि एक तोप के गोले के मार्ग की गणना करे, यह सिद्धांत को लागू करने का ही अभ्यास है। और यह लागू करना एक यंत्रवत काम भी हो सकता है (जैसे तोप के गोले का मार्ग पता करना) या कोई सोचने वाला काम भी हो सकता है जो पाठ्य पुस्तक से आगे जाए। यह सही है कि ये एकदम जायज़ अभ्यास हैं और किसी भी पाठ्य पुस्तक में होना ज़रूरी हैं, मगर ऐसे कुछ अन्य अभ्यास हैं, जो आम तौर पर पाठ्य पुस्तकों में नहीं पाए जाते। इनमें से एक तरह के अभ्यासों, अभ्यासों की दूसरी श्रेणी, का सम्बंध कारण बताने से है। मैं ये अभ्यास कई बार भौतिकी व इंजीनियरिंग के छात्रों पर आज़माता हूं। उनसे कहा जाता है कि अरस्तू के गति के सिद्धांत तथा आवेग (impetus) का वर्णन करें। वास्तव में अरस्तू का सिद्धांत सिर्फ गति को नहीं बल्कि सामान्य रूप में परिवर्तन को समेटे हुए है, उसका दायरे कहीं ज़्यादा व्यापक है। फिर भौतिकी के छात्रों से पूछा जाता है कि न्यूटन का सिद्धांत अरस्तू के सिद्धांत से बेहतर क्यों है। ऑनर्स परीक्षा में ए ग्रेड पाने वाले अधिकांश भौतिकी स्नातकों को इसका बिलकुल भी अंदाज़ नहीं होता। यदि विज्ञान को जांच-पड़ताल के एक तरीके के रूप में पढ़ाना है तो यह बहुत ज़रूरी है कि छात्र ऐसे सवालों के जवाब दे सकें कि क्यों न्यूटन का सिद्धांत अरस्तू के सिद्धांत से बेहतर है। उन्हें यह पता होना चाहिए।

अभ्यासों की तीसरी श्रेणी जांच-पड़ताल की क्षमता से सम्बंधित होगी। मैंने बताया ही था सूर्य केंद्रित परिकल्पना में बगैर कारण जाने अपने विश्वास को लेकर मैं कितना शर्मिंदा था। तो भाग 2 में मेरा पहला उदाहरण है कि मैंने पाठ्य पुस्तकों के बाहर पढ़कर क्या समझा। मैं यहां एक महत्वपूर्ण बात बताना चाहूंगा कि ये ऐसे अभ्यास नहीं हैं जो परंपरागत ढंग के प्रयोग-आधारित सीखने में फिट होंगे। कहने का मतलब कि छात्रों को पृथ्वी के घूर्णन का या सूर्य के आसपास परिक्रमा का या स्थिर पृथ्वी का कोई अनुभव नहीं है। मुद्दा यह है कि ये ऐसे अभायास हैं जिनमें छात्रों को कुछ अवलोकनों के बारे में सोचना है जो अन्य लोगों ने किए हैं। तो वास्तव में ये सोचने के अभ्यास हैं, हाथों से 'करने' के नहीं। यह सही है कि अनुभव-आधारित सीखना

महत्वपूर्ण है, हाथों से कुछ करना भी महत्वपूर्ण है मगर विज्ञान सीखने को इतने तक सीमित नहीं किया जा सकता। बहुत सारा विज्ञान कुर्सी पर बैठे-बैठे, समस्या के बारे में सोचकर सीखा जाता है। बताते हैं कि जब आइंस्टाइन और उनकी पत्नी हबल वेधशाला गए और उन्हें 100 इंची दूरबीन दिखाई गई और बताया गया कि ब्रह्मांड की खोजबीन के लिए इतने बड़ी-बड़ी दूरबीनें ज़रूरी हैं, तो कहते हैं कि आइंस्टाइन की पत्नी ने टिप्पणी की थी, "अरे, मेरे पति तो यह काम कागज़ के एक टुकड़े पर कर लेते हैं।" कागज़ के टुकड़े पर करना और 100 इंची दूरबीन से ब्रह्मांड को निहारना, ये दोनों ही वैज्ञानिक जांच-पड़ताल की शैलियां हैं। इन दो के बीच प्राथमिकताएं तय करने की कोशिश न करना ही ठीक है। हबल ज़मीन से जुड़े आदमी थे, जो सैद्धांतीकरण से इन्कार करते थे और आइंस्टाइन ने कोई प्रयोग नहीं किया।

इस अभ्यास के प्रथम हिस्से (बिंदु क्रमांक 15 - प्रमाण व तर्क को समझना के तहत) में पहले उदाहरण में सौर मंडल को लेकर चार संभव परिकल्पनाएं बताई गई हैं, एक कि पृथ्वी केंद्र में स्थिर है, जो टोलेमी की क्लासिक परिकल्पना है। विभिन्न किस्म के मत हैं और मैं डी को चुनता हूं जिसकी तुलना करना है। पर्चे के पृष्ठ 6 पर ऐसे अनुभव दिए गए हैं जो छात्रों के पास होते हैं, जैसे दिन-रात, 24 घण्टे का चक्र, मगर इनकी व्याख्या आप यह कहकर भी कर सकते हैं कि पृथ्वी घूमती है या यह कहकर भी कर सकते हैं कि सूर्य पृथ्वी के चारों ओर चक्कर काटता है। और छात्रों के लिए यह समझना बहुत ज़रूरी है कि यदि आप सिर्फ इन दो तथ्यों तक सीमित रखते हैं, तो ये दोनों सिद्धांत बराबर हैं। इसके बाद आप सूर्य के वार्षिक चक्र को देखते हैं। आपको किसी और चीज़ की ज़रूरत पड़ेगी; आपको यह मानना होगा कि पृथ्वी का घूर्णन एक कोण पर होता है वगैरह। और पहेली क्रमांक 4 ग्रहों की गति के बारे में है। इसमें ग्रहों की पश्च-गति (retrograde motion) का निर्णायक महत्व है। इस मुकाम पर आप ज़रूर टोलेमी के अधिचक्र (epicycles) के सिद्धांत का उपयोग कर सकते हैं मगर मामला पेचीदा हो जाता है; दूसरी ओर, हम देखते हैं कि सूर्य केंद्रित परिकल्पना अपेक्षाकृत सरल हो जाती है। और फिर जब आप फूको पेंडुलम तक पहुंचते हैं, जो पहेली क्रमांक 5 है, तो टोलेमी के सिद्धांत के पास कोई व्याख्या नहीं रहती। हम कई और चीज़ें जोड़ सकते हैं। मैंने तो कुछ केंद्रीय चीज़ों तक सीमित रखा है। शुक्र की कलाएं आदि अन्य चीज़ें हैं। और कुछ अन्य अभ्यास - पर्चे में बिंदु क्रमांक 16 - जांच-पड़ताल की क्षमताओं से सम्बंधित हैं। इनमें से कुछ का उपयोग मैंने प्रथम वर्ष स्नातक कक्षाओं में किया है। ज़रूरी नहीं कि ये विज्ञान के छात्र हों।

क्या ड्राइविंग के मामले में पुरुष स्त्रियों से बेहतर होते हैं? कई लोग मानते हैं कि पुरुष बेहतर ड्राइवर होते हैं। मेरी बेटी को हमेशा यह दिक्कत होती है कि अपनी मर्दानगी के दंभ में मर्द मानते हैं कि वह खराब ड्राइवर है। कैसे पता लगाएं। यह बहुत जटिल समस्या है क्योंकि हमें पहले तो यह परिभाषित करना पड़ेगा कि अच्छी ड्राइविंग क्या होती है और फिर परिकल्पना से सम्बंधित प्रमाण खोजना होंगे। वैसे बता दूं, कि ऐसे अधिकांश अभ्यास सोचने के अभ्यास हैं, करने के या सिर्फ अनुभव करने के अभ्यास नहीं हैं। मेरा पसंदीदा अभ्यास अभ्यास क्रमांक 4 है, यह मैंने बॉय की 'सोप बबल' से चुराया है। यह पूरी किताब ऐसे अभ्यासों से भरी है जो आपको अवलोकनों के ज़रिए सोचने को प्रेरित करते हैं। इनमें से कुछ में कुछ करना भी पड़ता है, करना और अनुभव करना।

यदि भाग 5 पर जाएं, तो इसमें मूल्यांकन कार्य के कुछ उदाहरण हैं जिनका उपयोग मैंने प्रथम वर्ष स्नातक छात्रों के साथ किया है। इनमें से कुछ में एकाधिक विकल्प के सवाल हैं जिनमें 5 की बजाय 15 विकल्प दिए गए हैं और किसी एक विकल्प पर नहीं बल्कि एक से अधिक विकल्पों पर निशान लगाना है। इस तरह

से एकाधिक विकल्प वाले सवालों का उपयोग खुले उत्तरों वाले सवालों के रूप में किया जा सकता है मतलब पूरी तरह खुले उत्तरों वाले सवाल नहीं मगर उस दिशा में बढ़ते हुए। इसका कारण यह है कि यदि आप 2-3 हज़ार छात्रों को पढ़ाते हैं, तो आपके पास सचमुच खुले उत्तरों वाले सवाल पूछने का कोई तरीका नहीं रह जाता, थककर चूर हो जाएंगे। तो हमें दर्दरहित मगर ठीक-ठाक मूल्यांकन का कोई रास्ता निकालना होगा - आदर्श नहीं व्यावहारिक तरीका। उम्मीद है कि मैंने आपके इस सवाल का कुछ जवाब तो दिया है कि पाठ्यक्रम मूल्यांकन और कक्षा शिक्षण के व्यावहारिक पहलुओं को वैज्ञानिक जांच-पड़ताल की प्रकृति सम्बंधी सवालों से किस तरह जोड़ें। शुक्रिया।

चर्चा

राजेंद्र सिंह : मोहनन, कई विरोधाभास दर्शाने के लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। मैं एक संक्षिप्त टिप्पणी करूंगा और फिर एक सवाल पूछूंगा। मैं आपसे सहमत हूं कि एक विरोधाभास है और मैं शायद इसमें एक और जोड़ सकता हूं। मेरा ख्याल है कि विज्ञान शिक्षा में आम तौर पर आपको विज्ञान मिलता है मगर शिक्षा बिलकुल नहीं। मेरा अनुभव भी लगभग उसी पृष्ठभूमि में है जैसा मोहनन का है। भौतिकी में स्नातक शिक्षा के साथ मुझे लगता है कि मुझे विज्ञान तो विज्ञान विभाग से मिला। विडंबना यह है कि लगभग सारी शिक्षा मानविकी से मिली। यहां तक कि जो भौतिक शास्त्र मैंने सीखा उस पर सवाल उठाने की शिक्षा भी भौतिकी से नहीं, मानविकी से मिली। इससे हमें कई अन्य सेतु बनाने की गुंजाइश मिलती है। मेरा सवाल यह है: विज्ञान शिक्षा की विरोधाभासी प्रकृति को देखते हुए, आपको क्या लगता है कि वह कौन-सा रास्ता है जिससे वैज्ञानिक न्यूटन की जगह आइंस्टाइन को स्थापित कर पाए। यदि आलोचनात्मक सोच इसमें अंतर्निर्मित नहीं है, तो वे न्यूटन से आइंस्टाइन तक कैसे पहुंचे?

फरीदा खान : मैं एक छोटी सी टिप्पणी करना चाहती हूं। मेरा ख्याल है कि आपने विज्ञान और कक्षा शिक्षण के सैद्धांतिक पहलुओं का अद्भुत प्रस्तुतीकरण किया है। मैं कुछ जोड़ना चाहती थी। आपने बताया कि गैर-आलोचनात्मक ढंग से तथ्य प्रदान करने से उन बच्चों या छात्रों या वयस्कों को किसी भी चीज़ पर सवाल उठाने की क्षमता नहीं मिलती जो इस तंत्र से निकले हैं। स्कूलों और शिक्षकों के साथ मेरा अनुभव बताता है कि उतनी ही महत्वपूर्ण बात यह है कि इससे उनमें अपने तथ्यों को लेकर आत्म विश्वास भी पैदा नहीं होता क्योंकि उनके पास इन्हें सही कहने का कोई कारण नहीं होता। तो यह एक दुष्चक्र बन जाता है क्योंकि जो तथ्य आप जानते हैं आप उनसे चिपके रहते हैं, क्योंकि वही आपको पता है मगर आप यह नहीं जानते कि वे सही क्यों हैं और इसलिए आप उम्मीद करते हैं कि उन्हें जस-का-तस छात्रों तक पहुंचा दें। आप अपने विश्वास को सही साबित नहीं कर सकते, इसलिए आपको समझ नहीं आता कि छात्रों से सवाल पूछने को कैसे कहें।

कमल महेंद्रू : मैं प्रोफेसर मोहनन को धन्यवाद देना चाहूंगा कि उन्होंने उन मुद्दों को रेखांकित किया है जिनके साथ हम पिछले कुछ वर्षों से जूझते रहे हैं, और आपने जो उदाहरण लिया, ठीक उसी के साथ जूझते रहे हैं। मगर मुझे लगता है कि जो मुद्दा हमारे अनुभव से उभरा है, वह यह है कि विज्ञान शिक्षा के ऐसे पैराडाइम का अनुकरण करते हुए आपको शैक्षिक परिणामों पर भी गौर करना होगा। अवरोध वहां आता है जब आप किसी विचार के विकास को साझा करना चाहते हैं - परिकल्पना और उसके लिए प्रमाण कैसे जुटाए गए,